अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

ऋग्वैदिक काल के संदर्भ में स्त्री उत्थान व सामाजिक संघर्ष

रजनी रानी
सहायक प्रोफेसर (हिन्दी विभाग)
चौ. देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा।

सृजनात्मक साहित्य का इतिहास यह प्रमाणित करता है कि ऋग्वेद से पूर्व किसी रचना का होना ज्ञात नहीं है। विद्वानों के मतभेद के बावजूद 1000 ई.पू. से पहले उनके होने की स्थिति पर कोई संदेह नहीं है। कुछ विद्वान इसकी समय सीमा 3000 ई.पू. तक भी मानने के पक्ष में हैं। सभ्यता, संस्कृति और रचनात्मकता के आरम्भिक काल में स्त्रियाँ सर्जनात्मक कार्य से किस प्रकार जुड़ती हैं, उनका अपना रचनात्मक संसार एवं सामाजिक स्थिति कैसी है इसे उनके रचनात्मक अनुभव से समझना ज्यादा समीचीन है। स्त्री तो पर्याय ही है सृजन का। एक नई जिन्दगी को रचते समय वह पीड़ा के जिस दौर से गुजरती है उसे हम सृजन की तैयारी के संदर्भ में समझ सकते हैं और फिर वह जब सृजन के कलात्मक जगत से जुड़ती है तब उसका यह पीड़ाबोध उसकी सहायता करता दिखाई देता है। रचने के पहले का व्यापक प्रभाव, मन के साथ उसकी अंतः क्रियायें, भीतर की व्याकुलता तथा छटपटाहट अंततः किसी रचना को बाह्य रूप या कहें पूर्ण रूप दे सकने में समर्थ हो पाते हैं (वैसे क्रोचे के यहाँ बाह्य रूप अपने अपूर्ण रूप में अभिव्यक्त हो पाता है, पूर्ण रूप की निर्मिति तो केवल भीतरी स्तर पर ही संभव है) भारतीय समाज में जहाँ पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री का स्थान पुरुष के सामने दूसरे पायदान पर समझा गया हे वहाँ स्त्री के रचनात्मक सरोकार बहुत ही विशद एवं गहरे हो जाते हैं। उसका रचनात्मक संघर्ष उसके सामाजिक संघर्ष से जुड़ कर अपना प्रतिफल तैयार करता है। परिणामतः पीड़ा की दोहरी कसौटियाँ रचना को गहरी अर्थवत्ता से संयुक्त करती हैं। आज इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक की समाप्ति के साथ जब समाज, परिवार, जीवन की परिस्थितियाँ एंव चुनौतियाँ बदल चुकी हैं हम वर्तमान से अतीत में झाँकने की अगर कोशिश कर सकते हैं तो उसका माध्यम उन स्त्री रचनाकारों की रचना ही हो सकती है। एक ही समाज में रहते हुए भी स्त्री–पुरुष के संघर्ष का स्तर, घनत्व और परिणाम अलग होता है। पुरुष प्रधान समाज में केन्द्र पुरुष होता है ओर स्त्री की स्थिति द्वितीयक तथा उसके विस्तार की होती है तो जाहिर है स्त्री जिन समस्याओं से दो–चार होती है, पुरुष के लिए वे समस्यायें ही नहीं होती। विवेच्य काल में भी परिवार पितृसत्तात्मक होते थे, अतः पुरुष का महत्व स्त्री की अपेक्षा अधिक दिखाई देता है किन्तु स्त्री की सामाजिक स्थिति भी कमजोर नहीं कही जा सकती है। सम्पत्ति पर स्त्री पुरुष का संयुक्त स्वामित्व होता था। पुत्र जन्म आह्लाद का कारण होता था क्योंकि युद्धों के लिए बड़ी–बड़ी सेनाओं की आवश्यकता होती थी। शायद यही

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

कारण रहा होगा कि स्त्रियाँ दस–दस पुत्रों की माँ बनती थीं। स्त्रियों के द्वारा युद्ध में सहयोग किये जाने के उदाहरण भी मिलते हैं। ऋग्वेद के 10वें मंत्र के 102 सूक्त में मुद्गलानी के संदर्भ देखे जा सकते हैं। अनेक स्थलों पर पुत्र जन्म की कामना के उल्लेख मिलते हैं किन्तु कन्या जन्म भी किसी दुख का कारण नहीं था। कन्या शिशु के जन्म लेने पर स्त्रियाँ दुन्दुभी तथा गोमुख नामक वाद्य बजाती थीं। बहुत से ऐसे वाद्यों का उल्लेख मिलता है जिन्हें केवल स्त्रियाँ ही बजाती थीं जैसे– अपघातालिका, तालुका वीणा, काण्डवीणा तथा पिछौरा।[1] विवाह के पूर्व स्त्रियाँ पिता के घर में साधिकार रहती थी और विवाह के पश्चात पति के घर की साम्राज्ञी होती थीं।[2] ऋग्वेद के 10वें मंडल के 85 सूक्त की ऋषिका सूर्या सावित्री हैं। सूर्या सूर्य पुत्री हैं, सविता से उत्पन्न अतः सावित्री कही जाती हैं। सूर्या के विवाह एवं दाम्पत्य को लक्ष्य करके इस सूक्त की रचना हुई है। सूर्या को लौकिक वधू का उपलक्षण भी माना गया है। मंत्र सं. 36 में विवाह के अवसर पर वर का वधू से कथन है, 'हे वधू ! आपके हाथ को सौभाग्य वृद्धि के लिए मैं ग्रहण करता हूँ। मुझे पति रूप में स्वीकार करके आप वृद्धावस्था पर्यन्त मेरे साथ रहना।[3] इसी प्रकार पिता सूर्य की मंगल कामना मंत्र संख्या 25 में अभिव्यक्त है। वे कहते हैं, हे कन्ये। इस पितृकुल के दायित्व से हम आपको मुक्त करते हैं। उस (पतिकुल) से आपको भली प्रकार संयुक्त करते हैं।[4] ये संदर्भ पितृकुल एवं पतिकुल में स्त्री की मजबूत स्थिति को व्यक्त करते हैं। सार्वजनिक उत्सवों में, धार्मिक अनुष्ठानों में देवों के साथ देवियों का भी आह्वान होता था. उनकी कृपा की आकांक्षा होती थी। ऋग्वेद के दूसरे मंडल के 41वें सूक्त के मंत्र संख्या 16,17,18,19,20,21 में सरस्वती तथा द्यावा पृथिवी के संदर्भों से उनकी सामाजिक स्थिति एवं प्रभाव को लक्ष्य किया जा सकता है। मंत्र स. 16 में प्रार्थना करने वाला कहता है– हे देवो में सर्वश्रेष्ठ सरस्वती, हम मूर्ख बालकों के समान हैं अतः हमें उत्तम ज्ञान प्रदान करें। 17 वें मंत्र में कहा गया है कि आपके तेजस्वी आश्रय में ही सम्पूर्ण जीवन सुख आश्रित है। मंत्र सं. 21 में देवियों को संबोधित करके कहा गया है कि देवगण सोमपान के लिए आपके पास बैठें।

स्त्रियों को पठन–पाठन का अधिकार था। परिवार की व्यवस्था चलाने में तथा आर्थिक समृद्धि में भी वे योगदान देती थीं। वे कपड़े बुनती थीं। घर के बाहर किये जाने वाले व्यवसायों को करती थीं, कृषि कार्य में सहयोग करती थीं। घनुष, बाण तथा टोकरी बनाती थीं। वैदिक साहित्य में प्राप्त 'इषुकर्जी' शब्द परवर्ती साहित्य में नहीं मिलता है। पर्दा प्रथा का चलन नहीं था अतः घर से बाहर आने–जाने में कोई अवरोध नहीं था। यहाँ तक कि विवाह के समय भी वधू का संवाद कई ऋचाओं में दखा जा सकता है। वे सामाजिक सभाओं का संचालन कुशलता के साथ करती थीं। वे रचनाकार भी थीं। जहाँ तक स्त्री रचनाकारों या मंत्रद्रष्टा

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

ऋषिकाओं का संबंध है तो हम विवेच्य काल में इनकी एक लंबी परंपरा पाते हैं। मैंने अपने अध्ययन में निम्नलिखित स्त्री रचनाकारों (मंत्रद्रष्टा ऋषिकाओं) की रचनायें ऋग्वेद में संकलित पाई हैं। शचीपौलोमी, यमीवैवस्वती, अदिति दाक्षायणी, विश्ववारा आत्रेयी, उर्वशी, गोधा, घोषा काक्षीवती, दाक्षिणा प्राजापत्या, सार्पराज्ञी, सूर्या सावित्री, सरमा, नदियाँ (व्यास–सतलज) इन्द्राणी, अगस्तस्वसा, इन्द्रस्नुषावसुक्रपत्नी, जहु ब्रह्मजाया, श्रद्धा कामायनी, सरस्वती, शरबती आंगिरसी, अपाला आत्रेयी, ऋषिसुता लोपामुद्रा, रोमशा, वागम्भृणी, इन्द्रमाताएँ या देवों की बहनें, पर्वत काण्व और नारद काण्व अथवा शिखण्डिनी, कश्यप ऋषि की दो अप्सरा पुत्रियाँ आदि। इनमें कुछ ऋषिकाओं (रचनाकारों) के नाम नहीं मिलते हैं, उनकी पहचान उनके पिता, भाई, पति के साथ जुड़ती हैं। रचनाकार्य से संबद्ध होने पर भी बेनाम रह जाने की विडम्बना इनके साथ जुड़ी है। उदाहरणस्वरूप–

1. इन्द्रमाताएँ या देवों की बहनें जिन्हें ऋग्वेद के 10वें मं. के 153 सूक्त का ऋषित्व प्राप्त है। इन्द्रमातरो देवजामयः उल्लिखित है। कहीं–कहीं इन्हें एकवचन रूप में इन्द्रमाता के रूप में उल्लिखित किया गया है।

2. अगस्तस्वसा 10वें मं. के 60वें सूक्त की छठी ऋचा की कर्जी हैं किन्तु इनका उल्लेख अगस्त स्वसा (बहन) के रूप में हुआ है। इनका नाम नहीं मिलता है।

3. इन्द्रस्नुषा वसुक्रपत्नी 10वें मं. के 28वें सक्त के 1 मंत्र की रचनाकार हैं। वसुक्र इंद्र के पुत्र कहे गये हैं। इनका भी मूल नाम दर्ज नहीं है।

4. कश्यप ऋषि की दो अप्सरा पुत्रियाँ 9 मंडल के 104 सूक्त की रचनाकार हैं इनका भी मूल नाम नहीं मिलता है।

ये उल्लेख पितृसत्ता की मजबूत स्थिति का परिचय तत्कालीन परिस्थितियों के संदर्भ में देते हैं और यह सत्य भी सामने रखते हैं कि पुरुषों के संबंध से, उनकी नाम के सहारे से भी स्त्रियाँ जीवन बिता देती थीं। ऊपर दिये गये 4 संदर्भों में स्त्रियों के चारों महत्वपूर्ण संबंध (माँ, पत्नी, बहन, पुत्री) का सत्य उद्घाटित है। ये रचनात्मकता से जुड़ी स्त्रियों के संदर्भ हैं। समाज भी इस प्रक्रिया से अछूता नहीं रहा होगा।

शची पौलोमी पुलोम ऋषि की पुत्री है। इन्द्र इनके पति हैं। शची पौलोमी को ऋग्वेद के दसवें मं. के 159 सूक्त की ऋषिका होने का गौरव प्राप्त है। ये इस सूक्त की देवता भी हैं। इस सूक्त मे ये आत्म स्तुति करती हैं। इसमें 6 मंत्र हैं जिनमें अभिव्यक्त उनके विचार तत्कालीन समाज

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

में स्त्री की स्थिति उसके गर्व के विषय, उसके नियन्त्रण, उसकी चौकन्नी दृष्टि का सत्य उद्घाटित करते हैं। वे कहती हैं, ''द्युलोक में स्थित सूर्यदेव का उदय ही मेरे लिए भाग्योदय के समान है। उनकी शक्ति से मैंने अपने स्वामी को वश में करके सपत्नियों को पराजित किया है। मैं ही ध्वजा के समान ज्ञानवती और सिर के समान प्रधान हूँ। उग्र होते हुए भी अपने स्वामी को मधुर वचन बोलने के लिए सहमत करती हूँ। मुझे सर्वोत्तम जानकर स्वामी मेरे कार्यों का सदैव अनुमोदन करते हैं। मेरे पुत्र शत्रुओं का नाश करने में समर्थ और मेरी ही कन्या सर्वश्रेष्ठ रंग–रूप से सुशोभित है। मैं सबके ऊपर विजय प्राप्त करती हूँ। स्वामी भी मेरे यश की चर्चा करते हैं। जिस यज्ञ से मेरे स्वामी इन्द्रदेव समर्थ और जगत में विख्यात हुये हैं देवों के निमित्त वही यज्ञ अनुष्ठान मैंने भी सम्पन्न किया है। अस्थिर व्यक्तियों के तेज और ऐश्वर्य की भाँति मैं सभी सपत्नियों के तेज और धन को विन्ष्ट करती हूँ। मैं अपने स्वामी और कुटुम्बियों को भी अपने अधिकार में रखती हूँ। यह उदाहरण बहुपत्नी प्रथा तथा उनके संकटों और द्वन्द्व का स्पष्ट कथन करता है। सपत्नियों की स्थिति शत्रु से कम नहीं है। यह तो परिवार की स्थिति है। समाज में गौरव उसी स्त्री का होता है जिसका पति प्रतिष्ठावान, ऐश्वर्यवान हो, वह स्वयं पति को वश में करने वाली हो तथा जिसके पुत्र सामर्थ्यवान और पुत्री सौन्दर्यवान एवं गुणवान हो। शची पौलोमी हर मोर्चे पर सफल हैं परिवार के स्तर पर मजबूत हैं, समाज में इसी कारण प्रतिष्ठा प्राप्त हैं तथा रचनाकार के रूप में भावनाओं को अभिव्यक्त करने में समर्थ भी हैं।

ऋग्वेद के दशम् मंडल के 95 सूक्त में उर्वशी–पुरुरवा ऐल संवाद है। उर्वशी का पुरुरवा से स्नेह हुआ था। कुछ शर्तों के साथ वह उनके साथ पत्नी की तरह रही। शर्त टूटने पर वे चली गईं। पुरुरवा उन्हें खोजकर अपने साथ वापस ले जाना चाहते हैं किंतु उर्वशी तैय्यार नहीं होती है। इसी संदर्भ में दोनों का संवाद है। 18 छंदों में यह संवाद है जिसमें 10 संवाद पुरुरवा एवं 8 उर्वशी के हैं। यह पूरा संवाद स्त्री की गरिमा, निर्णयात्मक क्षमता तथा स्वतंत्रता का सत्य उद्घाटित करता है। वे कहती हैं, हे पुरुरवा ! पृथ्वी के संरक्षण हेतु आपने पुत्र को जन्म दिया। मुझमें गर्भ की स्थापना की, इस बात से परिचित होकर मैंने बार–बार आपसे (मर्यादा पालन हेतु कहा था, परन्तु आपने मेरे कथन पर बार–बार ध्यान नहीं दिया। आपने पारस्परिक स्नेह को भंग किया है, अब शोक करने से कोई लाभ नहीं है।[5] मात्र निरर्थक वार्ता से हमारा क्या भला होगा? उषा के समान आपके समीप से मैं चली आ रही हूँ। अतः हे पुरुरवा ! आप दुबारा अपने घर वापस जाएँ। मैं आपके लिए वायु के समान ही दुर्लभ हूँ।[6] आप आँसू बहाते हुए न लौटें, आपका चाहा हुआ मैं आपके पास प्रेषित कर दूँगी। आप अपने अन्दर जो आसक्ति है, उसे निकाल दें। मूर्ख व्यक्ति मेरा ठिकाना प्राप्त नहीं कर सकते हैं।[7]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

उर्वशी आगे कहती हैं, हे पुरुरवा ! आप मृत्यु को प्राप्त न हों, न यहाँ पृथ्वी पर गिरें तथा अमंगल सूचक भेड़िया आदि आपको भक्षित न करें, आपका विनाश न करें। स्त्रियों की मैत्री और स्नेह कभी स्थायी नहीं होते। स्त्रियों और वृकों के हृदय समान होते हैं।[8] (यह बात स्वयं उर्वशी कह रही हैं जो एक स्त्री हैं। वृकों से उनके बचने की कामना भी करती है और वृकों तथा स्त्रियों के हृदय को समान भी बताती हैं) मानवीय शरीरों को विभिन्न रूपों में धारण करके मनुष्यों के बीच मैंने भ्रमण किया। आपके साथ मैं चार वर्षों तक रही। घृतादि का स्वाद दिन में अनेक बार प्राप्त किया। उसी से संतुष्ट होकर मैं विचरण कर रही हूँ।[9] इस संवाद में उर्वशी के द्वारा अभिव्यक्त विचार समाज में, परिवार में स्त्री की मजबूत स्थिति का उद्घाटन करते हैं। इसका महत्वपूर्ण पक्ष है विवाह संबंध के मूल में आपसी विश्वास एवं सहमति का होना। विवाह संस्था को बचाये रखने के लिए यह बहुत मायने रखता है और इसके भंग होने की स्थिति में विवाह का बचे रहना मुश्किल है जिसे हम इस आख्यान से समझ सकते हैं। उर्वशी इसी आधार पर पुरुरवा से अपने विवाह संबंध का परित्याग कर देती है।

ऋग्वेद में यमी वैवस्वती का भी ऋषिका के रूप में उल्लेख है। वे दसवें मं. के 154 सूक्त तथा 10वें सूक्त के 1,3,5,6,7,9,11,13 मंत्रों की रचनाकार हैं। दसवें सूक्त में यम–यमी संवाद है। 14 छंदों में यह संवाद है। जिसमें छः यम के एवं 8 यमी के हैं। यम और यमी सूर्य के जुड़वा पुत्र एवं पुत्री हैं। इस संवाद के अन्तर्गत यम और यमी के बीच संबंधों को लेकर विचार व्यक्त होते हैं। अपने प्रवास के क्रम में दोनों (यम–यमी) समुद्र के बीच निर्जन स्थान में हैं। यमी, यम के संयोग से संतान प्राप्ति की कामना करती है। यम उसके प्रस्ताव से सहमत नहीं होते हैं। वे यमी के तर्कों का खण्डन करते हैं तथा उसे मर्यादा पालन हेतु प्रेरित करते हैं। चूँकि यमी इस सूक्त के 8 मंत्रों की रचनाकार हैं अतः उनके दृष्टिकोण से तत्कालीन संदर्भ में स्त्री की वैचारिकता को समझने की कोशिश की जा सकती है। यमी का कथन है, ''हे यमदेव ! विशाल समुद्र (व्योम) के एकान्त प्रदेश में सख्य भाव या मित्र रूप से आपसे मैं मिलना चाहती हूँ। विधाता की इच्छा है कि नौका के समान संसार सागर में तैरने के लिए, पिता के नाती सदृश श्रेष्ठ–सन्तति प्रजननार्थ हम परस्पर संगत हों। यद्यपि मनुष्यों में ऐसा संबंध त्याज्य है, तो भी देवशक्तियाँ इस प्रकार क संसर्ग की इच्छुक होती हैं। मेरी इच्छा का अनुकरण आप भी करें। पतिरूप में आप ही हमारे लिए उपयुक्त हैं। हे यम ! सर्वप्रेरक और सर्वव्यापी जन्म देने वाले देव ने हमें गर्भ में ही (एक साथ रहकर) दम्पत्ति के रूप में सम्बद्ध किया है। उस प्रजापालक परमेश्वर की इच्छा (विधि–व्यवस्था) को रोकने में कोई सक्षम नहीं, हमारे इस संबंध का पृथ्वी एवं द्युलोक को भी परिचय है। हे यम। इस प्रथम दिवस की बात से कौन परिचित है? इसे कौन देखता है? इस पारस्परिक संबंध को कौन बतलाने में समर्थ

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

है? मित्र और वरुण देवों के इस महान धाम (स्थान) में अद्यःपतन की बात आप किस प्रकार करते हैं। पति के प्रति पत्नी के समर्पण के समान ही, तुम्हें अपने आपको सौंपती हूँ। एक ही स्थान पर साथ–साथ रहकर, कर्म करने की कामना मुझे प्राप्त हुई है। हम रथ के दो पहियों की तरह समान कार्यों में प्रेरित हों। रात्रि और दिवस दोनों ही हमारी कामनाओं को पूर्ण करें, सूर्य का तेज यम के लिए तेजस्विता प्रदान करे। द्युलोक और पृथ्वी के समान ही हमारा संबंध अभिन्न साथी है, अतएव यमी यम का साहचर्य प्राप्त करे, इसमें दोष नहीं है। हे यम। वह कैसा भाई, जिसके रहते बहिन अनाथ फिरे? वह कैसी बहिन, जो लाचार की तरह पलायन कर जाये? काम भावना से प्रेरित होकर मेरे द्वारा बहुत बात कही जा रही है, इसीलिए परस्पर काया को संयुक्त करो। और अंत में जब यम नहीं माने तब यमी उनसे कहती है, अरे यम। तुम बहुत दुर्बल हो। तुम्हारे मन को हृदय के भावों को समझने में मुझसे भूल हुई। क्या रस्सी द्वारा घोड़े को बाँधने के समान तथा लता द्वारा वृक्ष को आच्छादित करने के समान तुम्हें कोई अन्य स्त्री स्पर्श कर सकती है। (फिर मैं क्यों नहीं)[10] इस आख्यान परक संवाद का लौकिक पक्ष इस रूप में समझा जा सकता है कि स्त्री या पुरुष जिसमें भी चारित्रिक दुर्बलता दिखाई दे तो दूसरा पक्ष दृढ़ निश्चयी होकर मर्यादित आचरण का उदाहरण प्रस्तुत कर सकता है। इस अभिव्यक्ति को सभ्यता के आरम्भिक काल में मनुष्य की नैसर्गिक अभिव्यक्ति के रूप में देखा जा सकता है। इसका महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि स्त्री की अभिव्यक्ति को (भले ही उसे स्वीकार करने योग्य नहीं समझा गया) बिना काट–छाँट के साहित्य के रूप में स्वीकृति मिली। यमी वैवस्वती 154वें सूक्त की भी रचनाकार है। इस सूक्त के 5 मंत्रों में वे अपने पितरों का तर्पण करती दिखाई देती हैं। वे पितरों को संबोधित करके कहती हैं, किन्हीं पितर जनों के निमित्त सोमरस उपलब्ध रहता है और कोई घृताहुति का सेवन करते हैं। हे प्रेतात्मा ! जिनके लिए मधुर रस की धारा प्रवाहित होती है, आप उन्हीं के समीप पहुचें। जो तपश्चर्या के प्रभाव से किसी भी प्रकार पराभूत नहीं हो सकते, जो तपश्चर्या के कारण स्वर्ग को प्राप्त हुए हैं तथा जिन्होंने कठिन तप साधना सम्पन्न की है। हे प्रेतात्मा आप उन्हीं के समीप जायें। हे प्रेत ! जो शूरवीर संग्राम में अपने प्राणों की आहुति देकर वीरगति को प्राप्त हुए हैं अथवा जो लोग अनेकों प्रकार के दान देकर अपनी कीर्ति से इस संसार में अमर हो गये हैं। आप उन लोगों के समीप पहुचें। हे प्रेत ! हमारे जिन पूर्वजों ने सदैव सत्य की रक्षा की जो नियमित रूप से यज्ञादि सत्कर्मों में ही निरत रहे, ऐसे तपोबल के धनी पितरों के समीप आप पहुँचें जिन पूर्वज मनीषियों ने जीवन की हजारों श्रेष्ठ विधाओं को विकसित किया है। जो सूर्य की शक्तियों के संरक्षक हैं और तप से उत्पन्न जिन पितरों ने तपस्वी जीवन जिया, हे मृतात्मा ! आप उन्हीं के समीप पहुँचें।[11]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

अपाला आत्रेयी ऋग्वेद के आठवें मंडल के 91 सूक्त की रचनाकार हैं। ये अत्रि ऋषि की पुत्री हैं। चर्मरोग हो जाने के कारण पति के द्वारा इनका परित्याग कर दिया गया था। अपाला ने सूर्योपासना द्वारा आरोग्य प्राप्त किया था। अपाला से संबंधित इस आख्यान के आध्यात्मिक संदर्भ भी कहे जाते हैं और तब अपाला (अ–पाला) असंरक्षित का अर्थ देती है। अपाला को बुद्धि से जोड़कर भी देखते हैं। अत्रि को भी आध्यात्मिक अर्थ में त्रिगुणातीत ईश्वर के रूप म समझा जाता है। इस सूक्त में अपाला द्वारा सूर्योपासना से कान्ति संयुक्त होने का उल्लेख मिलता है।

विश्ववारा आत्रेयी ऋग्वेद के पाँचवें मं के 28वें सूक्त की रचनाकार हैं। इस सूक्त में वे अग्निदेव की स्तुति करती हैं। 28वें सूक्त के सभी छः मंत्रों का ऋषित्व इन्हें प्राप्त है। इन मंत्रों के विषय से यह ज्ञात होता है कि स्त्रियाँ यज्ञ कार्य सम्पन्न करती थीं। यज्ञाग्नि को सम्बोधित करके की गई कामना को भी इस संदर्भ में देखा जा सकता है। मंत्र सं. 3 में वे कहती हैं, ''हे अग्निदेव ! आप हम लोगों के उत्तम सौभाग्य (विपुल ऐश्वर्य) के लिए शत्रुओं को पराभूत करें। आपका तेज श्रेष्ठतम हो। आप दाम्पत्य संबंध को सुखी और सुनियमित करें और शत्रुओं के तेज को दबा दें।

गोधा को ऋग्वेद की डेढ़ ऋचाओं का ऋषित्व प्राप्त है। 10वें मंडल के 134 सूक्त की छठी ऋचा तथा 7वीं ऋचा के आधे हिस्से का रचनाकार इन्हें माना जाता है। गोधा ब्रह्मवादिनी थीं। सामवेद के डेढ़ मंत्र का ऋषित्व भी इन्हें प्राप्त है। इनमें वे इन्द्र तथा अन्य देवताओं की प्रार्थना करती हैं और यजमान के द्वारा किये जाने वाले धर्म संयुक्त एवं मर्यादित कार्यों के प्रति उन्हें आश्वस्त करती हैं। यजमान वे अपने को तथा अपनी तरह के अन्य याजकों को कहती हैं।

घोषा काक्षीवती कक्षीवत् ऋषि की ब्रह्मवादिनी कन्या थीं। वे ऋग्वेद के 10वें मंडल के 39 तथा 40 सूक्त की रचनाकार हैं। ऋग्वेद के प्रथम मं के 117 सूक्त के 7वें मंत्र में उनका उल्लेख मिलता है जिससे इनके बहुश्रुत होने का पता चलता है। घोषा अश्विनीकुमारों की स्तुति करती हैं। जिससे उनकी जरा तथा रोग से मुक्ति हो सके। वे दीर्घकाल तक रोग ग्रस्त रही थीं। 40वें सूक्त के 11वें मंत्र में वे स्वस्थ बलिष्ठ पति की प्राप्ति की कामना करती हैं। वे कहती हैं, ''हे अश्विनी कुमारों! मैं उस सुख से अपरिचित हूँ। आप ही उन सुखों का वर्णन करें, जो युवा पति–युवा पत्नी के साथ रहकर प्राप्त करते हैं। मेरी इच्छा है कि पत्नी से प्रेम करने वाले स्वस्थ बलिष्ठ पति के घर में पहुँचूँ।'' यह उदाहरण तत्कालीन समाज में स्त्रियों की स्थिति एवं

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

उन्मुक्त वातावरण का सत्य कहता है। एक बात इस संदर्भ में बहुत ही महत्वपूर्ण है कि स्त्रियाँ किस प्रकार अपने व्यक्तिगत सुख एवं कामनाओं की बात बेझिझक करती हैं।

दक्षिणा प्राजापत्या ऋग्वेद के 10 मंडल के 107 सूक्त की रचनाकार हैं। इस सूक्त में दिव्य, आङ्गिरस का भी ऋषि के रूप में उल्लेख है। प्रजापति सुता होने से वे प्राजापत्या अभिधान से सयुक्त हैं। इस सूक्त के 11 मन्त्रों में दान की महिमा तथा प्रकार का विवेचन है।

श्रद्धाकामायनी ऋग्वेद के दसम् मंडल के 151 सूक्त की ऋषिका हैं। काम गोत्रजा होने के कारण कामायनी पद से संयुक्त हैं। इस सूक्त में वे श्रद्धा ही ऋषि एवं देवता दोनों हैं। इस सूक्त के 5 मंत्रों में यज्ञ एवं दान में श्रद्धा पर विचार किया गया है। ऋषिका एक मंत्र में कहती हैं, ''हम प्रातः काल श्रद्धा का आवाहन करते हैं। मध्यान्ह काल में श्रद्धा का आवाहन करते हैं। सूर्यास्त काल में श्रद्धा की ही उपासना करते हैं। हे श्रद्धे ! आप हम सबको श्रद्धा से परिपूर्ण करें।[12]

जुहू ब्रह्मजाया 10वें मंडल के 109 सूक्त की ऋषिका हैं। इस सूक्त में वृहस्पतिदेव तथा जुहू का वर्णन है। जुहू को वृहस्पति की पत्नी कहा जाता है। वृहस्पति ने अपनी सदाचारिणी धर्मपत्नी का त्याग कर दिया था देवों ने प्रयास करके उन्हें पुनः मिला दिया था। इस सूक्त में इसी आख्यान का वर्णन है।

इन्द्राणी इन्द्रपत्नी हैं। शची पौलोमी भी इन्द्रपत्नी हैं। अब ये दोनों एक ही हैं या अलग कहना मुश्किल है क्योंकि इन्द्राणी ऋग्वेद के 10वें मंडल के 145 तथा 86 सूक्त की रचनाकार हैं और शची पौलोमी 159 सूक्त की। यद्यपि 145 सूक्त में इनका परिचय शची के रूप में दिया गया है और दोनों के रचना के विषय भी एक ही हैं। दोनों सपत्नी (सौत) भय से पीड़ित हैं। सपत्नी पर जीतने की कोशिश में प्रयासरत् हैं। बहुपत्नी प्रथा के समय में ये दो अलग व्यक्ति भी हो सकती हैं और इनका एक होना (इन्द्र की पत्नी होने के कारण) भी संभव है। इस सूक्त में औषधि के प्रयोग से सपत्नी को पराभूत करने तथा पति को अपने वश में करने के उपाय पर चर्चा है। इन्द्राणी कहती हैं इस लता रूपी बलवती औषधि को हम खोदकर निकालते हैं, इससे सपत्नी को पीड़ित किया जाता है और स्वामी (पति) की असाधारण प्रीति उपलब्ध की जाती है।[13] हे अत्युत्तम ओषधों हम उत्कृष्ट बनें, श्रेष्ठों में अति श्रेष्ठता को उपलब्ध करें। हमारी सपत्नी निकृष्टों में भी अति निकृष्ट स्थिति को प्राप्त करें।[14] मैं इन्द्राणी सपत्नी का नाम तक लेना उचित नहीं समझती हूँ। सपत्नी सभी के लिए अप्रिय होती है। सपत्नी को मैं दूर से भी अति दूर देश मे भेज देना चाहती हूँ।[15]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

लोपामुद्रा प्रथम मं. के 179 के प्रथम एवं दूसरे मंत्र की ऋषिका है। अगस्त ऋषि की पत्नी हैं। इन दोनों मंत्रों में सुसंतति उत्पन्न करने की आवश्यकता एवं मर्यादा का उल्लेख है। इस सूक्त में लोपामुद्रा एवं अगस्त के बीच संवाद है जिसमें पति–पत्नी की शारीरिक एवं मानसिक परपिक्वता के उपरान्त ही सन्तान उत्पन्न करने का निर्देश है।

रोमशा ब्रह्मवादिनी ऋग्वेद के प्रथम मंडल के 126 सूक्त की 7वीं ऋचा की कर्जी हैं। ये सामवेद के अनेक मंत्रों की भी कर्जी हैं। ये वृहस्पति की पुत्री के रूप में उल्लिखित है।

वागाम्भृणी ऋषि अम्भृण ऋषि की पुत्री हैं। ऋग्वेद में वाक् सूक्त प्रसिद्ध है। दसवें मं. का 125 सूक्त वाक् सूक्त के रूप में जाना जाता है। इसमें वाक् द्वारा आत्मकथन या आत्मस्तुति की गई है। प्रथम मंडल के 164 सूक्त के 45वें मंत्र में वाणी के चार रूपों (परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी) का उल्लेख है तथा मनुष्यों के द्वारा चौथे रूप वैखरी को ही प्रयोग किये जाने का कथन है। वाक् सूक्त के आठ छंदों में वाक् का प्रभाव, सामर्थ्य, कृपा दृष्टि का वर्णन है। वाक् देवी का कथन है, 'प्राणियों में जो जीवनीशक्ति (प्राण) है, दर्शन क्षमता है, ज्ञान–श्रवण सामर्थ्य है, अन्न भोग की सामर्थ्य है, वह सभी मुझ वाग्देवी के सहयोग से ही प्राप्त होती है। जो मेरी सामर्थ्य को नहीं जानते, वे विनष्ट हो जाते हैं। हे बुद्धिमान मित्रों! आप ध्यान दें, जो भी मेरे द्वारा कहा जा रहा है वह श्रद्धा का विषय है।[16] देवगण और मनुष्यगण श्रद्धापूर्वक जिसका मनन करते हैं, वे सभी विचार संदेश मेरे द्वारा ही प्रसारित किये जाते हैं जिसके ऊपर मेरी कृ पादृष्टि होती है वे बलशाली स्तोता ऋषि अथवा श्रेष्ठ बुद्धिमान होते हैं।[17] शश्वती आङ्गिरसी ऋग्वेद के आठवें मंडल के प्रथम सूक्त के 34वें मंत्र की ऋषिका है। अंगिरस की पुत्री होने के कारण आङ्गिरसी पद इनके नाम के साथ संयुक्त है। इस एक मंत्र में वे अपने पति को सम्बोधित करती हैं। उनके विशाल और सुन्दर शरीर तथा सौभाग्य की प्रशंसा करती हैं। इनके पति का नाम आसङ्ग प्लायोगि था।

सार्पराज्ञी का ऋषित्व 10वें मं. के 189 सूक्त को प्राप्त है। इसमे वे सूर्य, पृथ्वी, स्वर्ग एवं अन्तरिक्ष से संबंधित विषय पर अपने विचार प्रकट करती हैं। एक मंत्र में उनका कथन है कि इन (सूर्यदेव) का प्रकाश आकाश में संचरित होता है। ये (रश्मियों) प्राण से अपान प्रक्रिया सम्पन्न करती हैं। ये महान सूर्यदेव द्युलोक को विशेष रूप से प्रकाशित करते हैं।[18]

कुछ वैदिक ऋचाओं में नदियों का ऋषित्व भी देखा जाता है। ऋग्वेद के तीसरे मं. के 33 सूक्त के 4,6,8,10 मंत्र की ऋषिका सतलज एवं व्यास (विपाशा) नदियाँ हैं। विश्वामित्र ऋषि द्वारा की जा रही स्तुति के प्रत्युत्तर में वे अपनी सहज स्वभाविक गति का सत्य कहती हैं। वे

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

पुरुषों द्वारा सम्पादित कर्मों में अपनी उपेक्षा न किये जाने की बात भी कहती हैं। नदियाँ कहती हैं, ''हम नदियाँ अपने जल प्रवाह से सबको तृप्त करती हुई देवों द्वारा स्थापित स्थान की ओर बहती हुई जा रही हैं। अनवरत प्रवहमान हम अपने प्रयास से कभी भी विश्राम नही लेती हैं (यह तो हमारा सहज सामान्य क्रम है) फिर ब्राह्मण विश्वामित्र द्वारा हमारी स्तुति क्यों की जा रही है?"[19] हे स्तुतिकर्ता विश्वामित्र अपने ये स्तुतिवचन कभी नहीं भूलना। भावी समय में यज्ञों में इन वचनों की उद्घोषणा द्वारा आप हमारी सेवा करें। हम दोनों आपको नमस्कार करती हैं। पुरुषों द्वारा सम्पादित कर्मों में कभी भी हमारी उपेक्षा न करें।[20] हे स्तोता। हम दोनों नदियाँ अपनी स्तुतियाँ सुनती हैं (आप दूरस्थ देश से रथ और शकट के साथ आये हैं।) इसलिए जैसे माता पुत्र को स्तनपान कराने के लिए अवनत होती है अथवा धर्मपत्नी अपने पति के प्रति नम्र हाती है, वैसे ही हम आपके प्रति अवनत होती हैं (अपने प्रवाह को कम करके आपको जाने के लिए मार्ग प्रदान करती हैं।)[21]

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि ऋग्वैदिक काल की स्त्रियाँ अपनी वैचारिकी में, रचनात्मकता में, पारिवारिक संबंधों में, दार्शनिकता तथा लौकिकता हर क्षेत्र म मजबूत आधार पर अवस्थित थीं। ये ऋषि रचनाकार घर की, धन सम्पदा की, पुत्र–पुत्रियों की, पति की, हार की, जीत की, इनसे मिलने वाली खुशियों की चिन्ता करती दिखाई देती हैं। घर की केन्द्रीयता को उन्होंने भलीभाँति समझा तथा उसे बनाये एवं बचाये रखने के सारे प्रयास किये। चूँकि पुरुष एक से अधिक स्त्रियाँ रख सकते थे अतः चुनौती स्त्री के ही समक्ष अधिक थी, इसे हम शची पौलोमी के विचारों में अभिव्यक्त देख सकते हैं। भले ही 'घर' सुरक्षा का, मजबूती का आधार था किन्तु वैयक्तिक स्वतंत्रता और चेतना के आड़े यदि 'घर' आता है तो वे उसे भी छोड़ने में हिचकती नहीं हैं, उर्वशी–पुरुरवा प्रसंग में इसे देखा जा सकता है। जहाँ तक यम–यमी संवाद की वास्तविकता का प्रश्न है ऋग्वैदिक साहित्य में भले ही हम इसे घटित होता नहीं देखते किन्तु समाज में हर काल में इस प्रकार के उदाहरण यदा–कदा दिखाई और सुनाई पड़ते रहते हैं साहित्य में भी इसके स्वर (दबी जुबान में ही सही) अभिव्यक्त हुए हैं। स्त्रियों की पुरुषों के कारण और संबंधों से ही पहचान बनी हो इतना ही सत्य नहीं है पुरुषों की भी स्त्रियों के कारण पहचान बनती है इसे घोषा के पुत्र सुहस्त्य के संदर्भ म देख सकते हैं। घोषा के पुत्र को सुहस्त्य घौषेय के रूप में पहचान मिली जो माँ के कारण है। ये ऋग्वेद के 10वें मं. के 41 सूक्त के ऋषि हैं। आगे चलकर इस परम्परा को हम और विकसित देखते हैं। जहाँ जाबाला के पुत्र सत्यकाम और इतरा के पुत्र ऐतेरेय को ब्रह्मविद्या मे प्रवेश ऋषि के रूप में प्रसिद्धि तथा माँ के नाम से पहचान मिलती देखते हैं।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

संदर्भ –

1. ग्रेट विमेन ऑफ इन्डिया, पृ. 101

2. ऋग्वेद दशम् मं. सूक्त 85 मंत्र 46, सम्राज्ञी श्वसुरे भव, सम्राज्ञी श्वश्रवां भव ननान्दरि सम्राज्ञी भव, सम्राज्ञी अधिदेवृषु

3. 10/85/36 ऋग्वेद

4. ऋग्वेद, 10/85/25

5. ऋग्वेद, 10/95/11

6. ऋग्वेद, 10/95/2

7. वही, 10/95/13

8. वही, 10/95/15

9. वही, 10/95/16

10. 10/10/1,3,5,6,7,9,11,13

11. वही, 10/154/1,2,3,4,5

12. वही, 10/151/15

13. वही, 10/145/1

14. वही, 10/145/3

15. वही, 10/145/4

16. वही, 10/125/4

17. वही, 10/125/5

18. वही, 10/189/2

19. वही, 3/33/4

20. वही, 3/33/8

21. वही, 3/33/10